डॉ रूचिरा ढींगरा
एसोसिएट प्रोफेसर
[हिंदी विभाग]
,
शिवाजी कालेज, दिल्लीविश्वविद्यालय

यशपाल : दिव्या उपन्यास— कथानक

“उपन्यास से मेरा अभिप्राय समाज की विचारधारा और विचारधारा के आधार में तारतम्य को प्रकट करना है। उपन्यास में जिन घटनाओं की हम कल्पना करते हैं वे स्थान और पात्रों के परिवर्तन से प्राय: घटती ही रहती है । ....हम विचारों को समाज का शाश्वत बंधन ना मान बैठे , बल्कि सामाजिक जीवन में इस सत्य को अनुभव करें कि हमारा अपना जीवन ही हमारे विचारों को जन्म देता है । हमारी विचारधारा हमारे जीवन की परिस्थितियों का परिणाम है।"(1)(यशपाल व्यक्तित्व और कृतित्व, डॉ सरोज गुप्ता, पृष्ठ 74) यशपाल उपन्यास में स्थान और पात्रों के परिवर्तन से घटने वाली घटनाओं में जीवन की परिस्थितियों के परिणाम से संपन्न अपनी विचारधारा का महत्व स्वीकार करते हैंउपन्यासकार युग की समकालीन समसामयिक परिस्थितियों के माध्यम से अपनी कथा का चयन करता है अपने दृष्टिकोण से समाज को देखता है अपनी मान्यताओं के आधार

पर प्रश्नों को सुलझाने का यत्न करता है समय विशेष में घटने वाली राजनीतिक सामाजिक धार्मिक आर्थिक परिवर्तन को भी अनदेखा नहीं कर पाता।

दिव्या उपन्यास यशपाल का तीसरा उपन्यास में लेखक ने ऐतिहासिक वातावरण के आधार पर यथार्थ को अंकित करने का सफल प्रयास किया है। उन्होंने स्वयं इस विषय में लिखा है-" दिव्या इतिहास नहीं इतिहास कल्पना मात्र है। ऐतिहासिक पृष्ठभूमि पर व्यक्ति और समाज की प्रवृत्ति और गति का चित्र है। लेखक ने कला के अनुराग से काल्पनिक चित्र में ऐतिहासिक वातावरण के आधार पर यथार्थ का रंग देने का प्रयत्न किया है। (1)(दिव्या , पृष्ठ 5)लेखक ने 2000 वर्ष पूर्व के समाज की स्थिति का विश्लेषण करने का स्तुत्य प्रयास किया है। मौर्य काल के पतन के उपरांत भारत में एक तरफ बौद्ध धर्म दिनोंदिन विकृत रूप धारण कर रहा था तो अन्यत्र वर्णाश्रम व्यवस्था समाप्त हो रही थी। परिणामस्वरूप समाज अधोगति की ओर उन्मुख हो रहा था। इस ऐतिहासिक पृष्ठभूमि पर दिव्या उस समय की शोषित नारी के रूप में पाठकों के समक्ष उपस्थित होती है। मंद्र गणराज्य में सागल नाम का एक गण है जिसकी गण परिषद द्वारा परिपाटी के रूप में बसंत ऋतु के स्वागत में मधु पर्व मनाया जाता है। महा पंडित देव शर्मा की प्रपौत्री द्विज कुल उत्पन्न राजनर्तकी मल्लिका की शिष्या दिव्या को इस उत्सव में नृत्य कला के प्रदर्शन पर सरस्वती पुत्री की उपाधि से अलंकृत किया जाता है। दिव्या का पालन उसके प्रपितामह धर्म स्थ देवशर्मा ने किया था। इस समारोह में शस्त्र प्रतियोगिता में दास पुत्र पृथुसेन को सर्वोत्तम खड़क धारी घोषित कर दिव्या द्वारा पुष्प मुकुट दिया जाता है। इस सम्मान

सेअभिजात वर्ग के युवक दिव्या की शिविका को कंधा लगाने के प्रश्न पर आपत्ति करते हैं। "दास पुत्र को आभिजात वर्ग के युवकों के साथ शिविका में कंधा देने का अधिकार नहीं" (2) दिव्या, पृष्ठ 21) पृथुसेन के पिता महाराज मिलिंद के दास थे। ब्राह्मणी युवती से विवाह करने के उपरांत अभिजात्य समाज में प्रवेश का अवसर पा लेते हैं लेकिन वर्णाश्रम समर्थ कुलीन समाज उन्हें अभी भी हीन दृष्टि से ही दिखता है अतः उन्हें गण परिषद का सदस्य होने का अवसर नहीं मिलता। "पृथुसेन का सेना में पद पाना सामंत के आसन का पहली सीढ़ी पर पांव जमाना है। यदि प्रत्येक कुल, सामंत कुल का पद और अधिकार पा सके तो अभिजात कुल का अधिकार क्या रहेगा।"(3) (दिव्या, पृष्ठ 31)

पृथुसेन के प्रति दिव्या आकर्षित होती है। मल्लिका के महल में होने वाली भेंटें उनमें प्रेम का संचार करती हैं। केंटस , सागल पर चढ़ाई करता है। युद्ध में जाने से पूर्व पृथुसेन , दिव्या से विवाह की इच्छा प्रकट करता है। दिव्या उसके समक्ष आत्मसमर्पण कर देती है परिणाम स्वरूप वह गर्भवती हो जाती है। "संयम की मुद्रा में वक्षस्थल पर बंधे उसके बाहु शिथिल हो गए। दिव्या को गूढ़ आलिंगन में लेकर उसके केशो, अश्रुसिक्त नेत्रों और कपोल को चूम कर अपनी कठोरता के लिए क्षमा मांग कर वह उसे सांत्वना देने लगा। तब दिव्या उसकी अधीरता को आश्रय देने के लिए विह्ल हो उठी। दोनों के हृदय अपने को भूलकर एक-दूसरे के लिए प्रवाहित हो उठे। "(4) दिव्या, पृष्ठ 31) युद्ध में केंद्रस मारा जाता है और पृथुसेन दावे का आधा प्रदेश , स्वर्ण, रत्न , अश्व, बहुमूल्य पदार्थों और दो हजार दास और सुंदर दासियों के साथ वापस लौटता है।

युद्ध से लौटकर पिता की आज्ञानुसार पृथुसेन सीरो से विवाह कर लेता है। लज्जित दिव्या सागल छोड़ने के लिए विवश होती है। वह कहती हैं_" मेरे लिए प्रसाद में स्थान नहीं। आर्य पृथुसेन के यहां भी स्थान नहीं । मैं वंचिता हूं , किंकर्तव्यविमूढ़ हूं , नहीं जानती कहां स्थान पाऊंगी। पथ में, वीथिका में , वन के वृक्षों के नीचे अथवा आपदा के जल में।"(5) (दिव्या, पृष्ठ 61) ऐसे में वह अपने पुत्र शाकुल के साथ विभिन्न यंत्रणाओं को सहती है।   दास व्यापारी प्रतुल द्वारा भुधर को बेची जाती है। वहां उसे दारा नाम से जाना जाता है। पुरोहित चक्रधर उसे खरीद या है जिससे वह उसके पुत्र को (पत्नी की शारीरिक अस्वस्थता के कारण)अपना दूध पिला सके। नगर में भिक्षा मंगवाकर चक्रधर को उसके अपराध की सजा दी जाती है। अपनी अवस्था से दुखी पीड़ित दिव्या आत्मा घात करने के लिए पुत्र सहित यमुना में कूद जाती है।

रत्न प्रभा नामक नर्तकी द्वारा बचा ली जाती है। यह जानकर कि दिव्या मल्लिका की शिष्या है उसके प्रति रत्न प्रभा का प्रेम और प्रगाढ़ हो जाता है। अब वह अंशुमाला नाम से नर्तकी के रूप में अपनी कला का प्रदर्शन करती है। तीन वर्ष बीत गए। मूर्ति कार मारिश दक्षिणापथ से सागल लौटते समय रत्नप्रभा के यहां ठहरता है जहां अंशुमाला को देख उसे पहचान जाता है। वह उसके प्रति अपनी भावनाओं को उसे दिव्या कहकर पुकारते हुए व्यक्त करता है-" भद्रे, जीवन में एक समय प्रयत्न की असफलता मनुष्य का संपूर्ण जीवन नहीं है। जीवन का हम नहीं देख पाते, वह निस्सीम है । वैसे ही मनुष्य का प्रयत्न और चेष्टा भी सीमित क्यों हो? असामर्थ्य स्वीकार करने का अर्थ है, जीवन में प्रयत्न हीन हो जाना , जीवन से उपराम हो जाना।"(6) (दिव्या , पृष्ठ 125) दिव्या

अपने विगत के जीवन के कष्टों को याद करना नहीं चाहती। वे अपनी वर्तमान स्थिति को स्वीकार कर चुकी हैं अतः बड़ी विनम्रता के साथ उत्तर देती है-" आर्य, धर्मस्य की गर्विता प्रपौत्री दिव्या मर चुकी है। उसके शव में कला जीवी नर्तकी वेश्या अंशुमाला जीवन का शेष समय निर्वाह कर रही है । मैं आर्य की संवेदा के प्रति अति कृतज्ञ हूं। (7) (दिव्या, पृष्ठ 127) आचार्य रूद्र धीर उसके सामने प्रणय निवेदन करते हैं जिसे वह अस्वीकार कर देती है।

मल्लिका के महल में विशाल समारोह का आयोजन होता है जहां पृथुसेन को पता चलता है कि रुद्रधीर और उसके साथी उसका वध करने का षड्यंत्र रच रहे हैं। स्थविर चीबुक के आदेशानुसार वह भिक्षुक बनता है। इधर मल्लिका अपने उत्तराधिकारी की घोषणा करना चाहती है और उपयुक्त पात्र के लिए तक्षशिला, मालव, मगध, मथुरा पुरी, दक्षिणापथ की यात्रा करती है। अंत में अंशुमाला की ख्याति सुनकर वहां जाती है और उसे पुत्रीवत आलिंगन करती हैं। सागल लौटकर वे फाल्गुन पूर्णिमा के अवसर पर दिव्या को अपनी उत्तराधिकारी घोषणा करती है। दिव्या मद्रगण और सागल नगर की जनपदकल्याणी पद प्राप्त करती है। ब्राह्मण समाज इसका विरोध करता है कि एक द्विजकन्या वेश्या के आसन पर बैठकर जन के लिए भोग्य बन वर्णाश्रम को अपमानित नहीं कर सकती। दिव्या मौन सिर झुकाए आचार्य रुद्रधीर के निर्णय की प्रतीक्षा करती है और मनोनुकूल उत्तर न पाकर नगर से बाहर आ जाती है।

पान्थशाला का आंगन लोगों से भरा गया और वे राजनर्तकी के संबंध में अपने अपने विचार रखने लगे। दिव्या पान्थशाला के द्वार से चलते हुए अंधेरे कक्ष में प्रवेश करती है। यहां

आचार्य रुद्रधीर, पृथुसेन और मारिश आते हैं। रुद्रधीर, दिव्या को कुलदेवी से सम्मानित करना चाहते हैं जिसे वह अस्वीकार कर देती है। उसकी दृष्टि में यह नारी का आदर नहीं था। वह कहती है-" आचार्य कुलवधू का आसन , कुलमाता का आसन , कुल महादेवी का आसन, दुर्लभ सम्मान है । यह अकिंचन नारी उस आसन के सम्मुख आदर से मस्तक झुकाती है परंतु आचार्य , कुलमाता और कुल महादेवी निराहृत वैश्या की भांति स्वतंत्र और आत्मनिर्भर नहीं है। ज्ञानी आचार्य कुलवधू का सम्मान कुलमाता का आदर और कुल महादेवी का अधिकार आर्यपुरुष का प्रश्रय मात्र है । वह नारी का सम्मान नहीं उसे भोग करने वाले पराक्रमी पुरुष का सम्मान है । आर्य अपने स्वत्व का त्याग करके ही नारी वह सम्मान प्राप्त कर सकती है।"(दिव्या, यशपाल, भूमिका)() पृथुसेन , दिव्या से संघ में चलने के लिए कहते हैं किंतु भिक्षु धर्म में स्त्री त्याज्य की बात सुनकर वह उसे व्यर्थ मानती है। वह अंत में मारिश के प्रस्ताव को स्वीकार कर qaउसका वरण कर लेती है क्योंकि वह उसे संसार में रहकर सुख दुख का अनुभव करने की बात कहता है।